आज़ादी–ए–निस्वाँ और फातिमा ज़हरा(अ०)

मोहतरमा सैय्यदा कुमैल फातिमा साहिबा

आज़ादी–ए–निस्वाँ हमारे ज़माने का सबसे ज़ियादा सुलगता हुआ सवाल है। हर प्लेटफार्म पर, हर मुहाज़ पर, हर स्टेज पर, हर महफिल में, हर मज्लिस में आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा सुनायी देता है। ऐसा लगता है जैसे औरत हमारे ज़माने की सबसे मज़लूम क़ौम है। जिससे ज़िन्दा रहने के इन्सानी हुकूक़ भी छीन लिये गये हैं। और इस दौर के तमाम दानिश्वर मिलकर इसको अपने रहमो करम की भीख देकर इस मज़लूमियत से छुटकारा दिलाना चाहते हैं।

जब कि बात सूरज से भी ज़ियादा रौशन है कि ज़माने ने हर एतबार से तरक़्क़ी की है। इल्मी एतबार से, एख़लाक़ी एतबार से, समाजी और कारोबारी एतबार से भी हमारा ज़माना बेहद तरक़्क़ीयाफ्ता ज़माना कहलाता है। इसीलिये यह सवाल उठता है कि इतने तरक़्क़ीयाफ्ता दौर में जहाँ हर चीज़ ने तरक़्क़ी की हो और हर साँस लेने वाले को आज़ादी की साँस लेना नसीब हुआ हो वहाँ ख़्वातीन ही मज़लूम व महरूम क्यों रहें? कि उनको जुल्म से नजात देने के लिये आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा बुलन्द किया जाये? यहाँ यह बात भी ग़ौर करने वाली है कि अज़ादी–ए–निस्वाँ का यह नारा हक़ीक़ी है या इसके पीछे कुछ और है?

ज़ेरे नज़र मक़ाले में हम ने ख़्वातीन की मौजूदा हालत, आज़ादी–ए–निस्वाँ के नारे का पसमन्ज़र और इसी के ज़ेल में जनाब फातिमा ज़हरा (अ०) के उस्व–ए–हसना के आईने में इसका मुआज़ना करने की कोशिश की है।

अस्रे हाज़िर में ख़्वातीन दुनिया के हर शोब–ए–ज़िन्दगी में दाख़ील नज़र आती हैं। हवाई जहाज़ की पायलेट से लेकर बस की कण्डेक्र तक और आफिस में काम करने वाली कलर्क से लेकर वज़ीरे आज़म तक हर ओहदे और हर मक़ाम पर औरतों की रसाई मुमकिन है। और अब तो हिन्दुस्तान जैसे अज़ीम मुल्क में भी पार्लियामेन्ट की सीटों तक में ख़्वातीन के लिये रिज़र्वेशन का मुतालबा ज़ोर पकड़ता जा रहा है। औरतों पर होने वाले मज़ालिम के ख़िलाफ सख़्त क़ानून बना दिये गये हैं। हमारे यहाँ ऐसी अदालतें मौजूद हैं जिनमें औरतों को उनका क़ानूनी हक़ दिलवाया जाता है।

चुनानचे जिस शोब–ए–हयात पर आप नज़र डालें यह हौव्वा के बेटी आदम के बेटे के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वाली है। बल्कि इससे भी आगे निकल जाने की कोशिश में लगी हुई है। इस सारे सफरनामे और उन तमाम मनाज़िर में अगर आप ग़ौर करें तो औरत के ताल्लुक़ से इस तरक़्क़ीयाफ्ता दौर में एक चीज़ है जो हमें कहीं नज़र नहीं आती, वह है घर और ख़ानदान। तरक़्क़ी के जोश में आज का इन्सान यह भूल गया कि औरत चाहे कुछ भी बन जाये, जिन्दगी के हर

मैदान में चाहे कितने ही कारे नुमाया अन्जाम दे लेकिन अगर वह एक अच्छी ''माँ'' न बन सकी तो वह नाकाम है। दरअस्ल वह एक ऐसे काख़ाने को चलाने वाली है जहाँ इन्सान तैय्यार होते हैं। और अगर आप ग़ौर से देखें तो यह कारख़ाने ''जूते'' और ''पिस्तौल'' बनाने वाले कारख़ानों से कुछ कम ज़रूरी तो नहीं हैं। इन कारख़ानों के लिये जिन सिफात और क़ाबलियतों की ज़रूरत होती है। वह फितरत ने सबसे बढ़कर औरत को दीं हैं। अगर यहाँ क़ाबलियत, सलीक़े और दानिश्मन्दी से काम लिया जाये तो इन कारख़ानों से आला दर्जे के इन्सान तैय्यार हो सकते हैं।

लेकिन अफसोस का मक़ाम है कि हमारे ज़माने नें आज़ादी–ए–निस्वाँ के नाम पर औरत को अपने कारोबार के लिये एक दर्जा तो दे दिया, आज़ादी तो दे दी लेकिन माँ के दर्जे से महरूम कर दिया। औरत के मुक़द्दस व पाक रिश्तों के सारे शीराज़े मुनतशिर हो गये।

यह ही वह मक़ाम है जहाँ हमें सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि आख़िर आज़ादी–ए–निस्वाँ से हमारे ज़माने की मुराद क्या है? क्या वह अल्लाह तआला की नाफरमानी करना चाहता है। खुदाए वाहिद व यक्ता के इस निज़ाम से बग़ावत करना चाहता है जिसने इन्सान की दो असनाफ बनायी हैं एक मर्द और एक औरत, क्या परवरदिगारे आलम की यह तख़लीक़ बेकार है जो अब बग़ावत करके इन दोनों तख़लीक़ात को एक कर देने की कोशिश की जा रही है। औरत और मर्द के दायर–ए–अमल को अलग करना ख़ुद फितरत का तक़ाज़ा है। ख़ुदावन्दे आलम ने दोनों क़िस्म की ख़िदमात के लिये औरत और मर्द दोनों को अलग–अलग सिफात दीं, अलग–अलग कुव्वतें दीं, जिसको फितरत ने माँ बनने के लिये पैदा किया उसको सब्र व तहम्मुल बख़शा है, उसके मिज़ाज में नरमी पैदा की, उसको वह चीज़ दी जिसको मामता कहते हैं। वह ऐसी न होती तो हम और आप बख़ैर पलकर जवान न हो सकते थे। सख़्त मिज़ाजी, क़वी आअ्ज़ा, बुलन्द हिम्मती मर्दों को इसलिये दी कि उन पर भारी ज़िम्मेदारियाँ भी हैं। आज अगर आप इस तक़सीम को मिटाना चाहते हैं तो फिर यह फैसला कर लीजिये कि अब दुनिया को माओं की ज़रूरत नहीं है। थोड़ी ही मुद्दत गुज़रेगी कि इन्सान ऐटम बम और हाईड्रोजन बम के बग़ैर ही ख़त्म हो जायेगा।

तो अब आपको फैसला करना होगा कि क़ुदरत ने जो तक़सीम इन दोनों अस्नाफ के दरमियान खुद की है उसे ख़त्म करना इन्सान के बस की बात नहीं है। खुद इन्सान भी इस बात को जानता है कि अपने ख़ालिक़ से बग़ावत मुमकिन नहीं। तो फिर कोई और अम्र है, कोई और ग़र्ज़ है जिसके हुसूल के लिये वह आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा बुलन्द कर रहा है।

औरतों की आज़ादी का अलमबरदार होने का दावेदार हमेशा यूरोप रहा है जिसने खुद अपने समाज में औरत को इन्तिहाई घिनावना और घटिया मक़ाम दे रखा था। यहाँ तक कि मामूली ज़रूरतों के लिये जो इन्सानी ज़रूरियात हैं उसमें भी औरत को मर्द का मोहताज बना रखा है वही यूरोप जिसमें आज भी बुनियादी तौर पर मर्द ही समाज पर हावी है। उसने अपनी मर्दाना ''अना'' की तस्कीन के लिये औरत को घर से निकाला और अब बाज़ार में ले आना चाहता है। और इस तरह अपने दो मक़ासिद की तकमील चाहता है:–

1– औरत को बरहना करके जिन्सी मफाद हासिल हो।

2– औरत तिजारती अग़राज़ो मक़ासिद

में उसके काम आये।

ग़ौर कीजिये हर (Reception) पर औरत ही को क्यों बिठाया जाता है। हर (Sales Counter) सेल्स काउन्टर पर सेल्ज़गर्ल ही क्यों होती है, माल के इश्तेहार पर औरत ही की तस्वीर क्यों दी जाती है? और वह भी तक़रीबन बरहना। इस तरह औरत के ज़रिये अवामुन्नास के जज़्बात को भड़काकर ऐशो आराम के सामान की ख़रीदारी पर आमादा किया जाता है। और फिर इस बरहनगी की नुमाईश को ''आज़ादी–ए–निस्वाँ'' का नाम दिया जाता है। ग़ौर कीजिये यह निस्वानी आज़ादी है या ख़्वाहिशों को पूरा करना?

इस ज़माने में मुक़ाबल–ए–हुस्न भी रोज़ बरोज़ बढ़ते जा रहे हैं। हर कम्पनी अपनी शोहरत के लिये एक मुक़ाबल–ए–हुस्न बरपा कर देती है। और हया की देवी को बरहना करके उसके हुस्न की नुमाइश लगायी जाती है और इस तरह ज़ौक़े जमाल को शौक़े विसाल तक पहुँचा दिया जाता है।

क्या इसी को आज़ादी–ए–निस्वाँ कहा जाये?

एतराज़ किया जा सकता है कि अलमबरदाराने आज़ादी–ए–निस्वाँ सिर्फ यह ही तो नहीं करते औरतों को अदालत में, इन्तिज़ामिया में और शूरा में भी बराबर का मौक़ा दिये जाने का चर्चा है।

हम कहेंगे कि यह सही है कि इन मक़ामात पर ख़्वातीन की ख़िदमात जारी हैं। लेकिन यह बताइये कि क्या इससे पहले हमेशा सालेह समाज में सालेह ख़्वातीन अदालत, इन्तिज़ामिया और क़ानून साज़ इदारों में काम की ख़िदमत अन्जाम नहीं देती रही हैं? लेकिन यह भी वाज़ेह है कि किसी भी सालेह समाज में यह सालेह ख़्वातीन बेपर्दा नहीं हुईं। आज अगर ख़्वातीन इन मज़कूरा शोबाहाए ज़िन्दगी में दिखायी देती हैं तो बरहनगी के साथ और फिर कितनी औरतें हैं जो इन जलीलुल क़द्र ओहदों पर फाएज़ हैं और जो ख़्वातीन इन ओहदों पर फाएज़ हैं या फाएज़ रहें तो उनकी ख़िदमात का मा हसल भी ग़ौर फरमाइये कि एक महदूद मक़ाम पर महदूद अफ़राद को ही मुतास्सिर कर सकें। और वह भी अपने इस्लामी वक़ार और निस्वानी हया को खोकर। यह कहना मेरी अपनी जुराअत नहीं है बल्कि क़ुर्आने हकीम के 24वें और 33वें सूरह में तफसील के साथ अहकाम मौजूद हैं। उनमें औरतों को हुक्म दिया गया है कि:–

''लम यज़हरू अला औरातिन्निसाइ वला यज़रिब्न बिअरजुलिहिन्ना''

''वह अपने हुस्न और अपनी सजावट की नुमाइश न करती फिरें, घरों से बाहर निकलना हो तो अपने ऊपर एक चादर डाल कर निकलें और बजने वाले ज़ेवर पहन कर ना निकलें।''

(सूरएनूर आयत–31)

ग़ौर फरमाइये आज हमारे समाज में जिन्सी बेराहरवी का तनासुब हर ज़माने से ज़ियादा है। क्या यह दिखने वाली निस्वानी आज़ादी के ज़हरीले अस्रात में से एक नहीं है?

आज़ादी–ए–निस्वाँ के इस मुशाहेदे के बाद अब यह मुनासिब होगा कि हम इस्लाम और मुदर्रिसीने इस्लाम व मासूमीन अलैहिमुस्सलाम की हयाते तय्यबा पर ग़ौर करें और देखें कि उनकी सीरत में निस्वानी इज़्ज़त और आज़ादी के पैमाने क्या हैं? और चूँकि फातिमा ज़हरा (अ0) मासूमीने अतहार में अकेली ख़ातून हैं जो मासूमा भी हैं। उम्मुल अईम्मा भी हैं इसलिए हम उन्हीं की हयाते तय्यबा को उस्व–ए–निस्वानी मानकर आपके सामने पेश करते हैं।

कुर्आने हकीम ने मर्दों को औरतों के लिबास की हैसियत से पहचनवाया है।

गोया कुर्आने हकीम ने हमें बताया कि जिस तरह लिबास से इन्सान की हैसियत मुतअय्यन होती है कि वह किस हैसियत का मालिक है, कितनी तहारत व पाकीज़गी है, किस ज़ौक़ का मालिक है, यह तमाम चीज़ें ज़ाहिरी लिबास से ही पता चल जाती हैं। फिर लिबास एक ऐसी चीज़ है जो जिस्म की हिफाज़त करता है, गर्मी व सर्दी से बचाता है, बरहनगी से बचाता है। कुर्आने करीम का इशारा है कि औरतें तुम्हारी ज़ीनत का बाअिस भी हैं, तुम्हारी हैसियत भी इनसे मुतअय्यन होती है। वह तुम्हारी औलाद की मुहाफिज़ भी हैं।

अब हमें देखना है कि इस आयते करीमा की सही मिस्दाक़ शहजादी जनाब फातिमा ज़हरा (अ0) का तरीक़ा क्या है। मश्हूर वाक़ेआ है कि जब मौलाए कायनात का अक़दे मुबारक जनाब फातिमा ज़हरा (अ0) के साथ हो चुका तो दूसरे दिन पैग़म्बरे इस्लाम (स0) बेटी के घर तशरीफ लाये और दामाद से सवाल किया या अली! (अ0) तुमने अपनी बीवी को कैसा पाया। हज़रत अली (अ0) ने जो जवाब मरहमत फरमाया वह तमाम ख़्वातीने आलम के लिये निशाने राह है। और सिद्दीक़–ए–ताहिरा जनाबे फातिमा ज़हरा (अ0) की अज़मते किरदार को और उसके एतराफ को उनके मासूम शौहर की ज़बानी ज़ाहिर कर रहा है। नीज़ कुल मोमिनात के लिये मरज–ए–तक़लीद है। आपने फरमाया कि फातिमा (अ0) इबादते ख़ुदा में बेहतरीन मददगार हैं। यह है आयते कुर्आनी का अमली मिस्दाक़ कि औरतें मर्दो का लिबास हैं।

परवरदिगारे आलम ने नौअे इन्सानी को दो अस्नाफ में तक़सीम किया। सिन्फे मर्द और सिन्फे औरत। अल्लाह अगर चाहता तो एक ही सिन्फ काफी थी। लेकिन दो अस्नाफ ख़ुदा ने बनायी हैं तो इसी मक़सद के तहत कि दोनों को दो अहम तरीन ज़िम्मेदारियाँ सुपुर्द कीं। बाहर की ज़िम्मेदारियाँ मर्द को और घर की ज़िम्मेदारियाँ औरत को। और इन सबसे बढ़कर अफ़राद साज़ी का काम। इस फरीज़े के बारे में पहले भी अर्ज़ कर चुकी हूँ कि यह बड़ी अहम ज़िम्मेदारी है। ज़रा ग़ौर कीजिये कि क्या इससे बड़ा कोई मन्सब औरत के लिये मुमकिन था? चुनानचे शहज़ादी–ए–आलम को अगर इस मन्ज़िल पर देखा जाये तो आलम यह है कि मासूम–ए–आलम ने उम्मत को दो जलीलुल क़द्र इमाम दिये जो मासूम भी हैं और ऐसे मासूम कि उनके दामने इस्मत पर तर्के औला भी नहीं है। अगर औरतों में अफ़राद साज़ी की तो इस तरह कि वह दो शहज़ादियाँ जिनके नाम ज़ैनब और उम्मे कुलसूम हैं ज़माने को पेश कीं जिन्होंने मासूम इमामों के साथ इस्लाम को बाक़ी रखने में पूरी मदद की।

इसके अलावा यह भी एक अलग निशानी है कि दुनिया में आप अकेली बीबी हैं जिन्हें उम्मु अबीहा कहा गया और वह भी ज़बाने वही व रिसालत से। यह शर्फ़ सिर्फ़ आपकी ज़ात को हासिल है।

अक़वामे आलम को इतने बेहतरीन अफ़राद अता करने का एअ्ज़ाज़ जो हज़रत फातिमा ज़हरा को हासिल हुआ यह उनकी शख़्सी आज़ादी का मज़हर नहीं है। औलाद में अपनी छाप को पेश करना कोई आसान काम नहीं है। और अक़वाम की इससे बड़ी कोई ख़िदमत नहीं है। यह ख़िदमत तमाम इन्तिज़ामी उमूर पर मुक़द्दम है। तो मैं अर्ज़ करूँगी कि फिर औरत को क्यों मज़लूम व बेसहारा और ज़लील समझा जाये।

दूसरी अहम चीज़ पर्दा है जिसका शुरु में तज़किरा आ चुका है। सूरए नूर की 31वीं आयत में इसका वाज़ेह हुक्म मौजूद है। इसका दर्से अज़ीम भी हमें शहज़ादी के उस्व–ए–हसना से मिलता है। पर्दा समाज की बुराईयों और बेराहरवी का दरवाज़ा बन्द कर देता है। इन्सानी समाज को सालेह तरीन समाज बनाने के लिये सबसे ज़ियादा ज़रूरी चीज़ है। बेपर्दगी गुनाहों को जनम देती है और गुनाहगार समाज इस्लाम का मक़सूद समाज नहीं है। समाज अगर नेक नहीं होगा तो बुराई वाला हो जायेगा और बुरा समाज एक ही तरह औरत और मर्द की हिफाज़त के लिये बवाले जान है। तहक़ीक़ का अमल खो जाता है और शैतानियत हर जगह इन्सानों के बीच नाचने लगती है यह सूरते हाल इन्फ़ेरादी और इज्तेमाई हर एतबार से हर इन्सान के सिर्फ और सिर्फ घाटे की वजह है, नफा की वजह हो ही नहीं सकती।

इसलिये बिना किसी शक के कहा जा सकता है कि सालेह इन्सानी समाज बेपर्दा हो ही नहीं सकता। इस मुख़्तसर सी तमहीद के बाद देखिये कि पर्दे के सिलसिले में उस्व–ए–बतूल (स0) क्या है। सिद्दीक़–ए–ताहिरा वह साहेबे नज़र हैं कि जब रसूले अकरम (स0) के सवाल पर कि औरत के लिये सबसे बेहतर चीज़ क्या है कोई जवाब न दे सका तो आप ने फरमाया कि औरत के हक़ में सबसे बेहतर चीज़ यह है कि न मर्द उसे देखें और न वह मर्दों को देखे। ग़ौर फरमाइये कि इस जवाब से आपने यह ज़ाहिर कर दिया कि पर्दा सिर्फ औरत ही की ज़िम्मेदारी नहीं बल्कि पर्दे के क़याम में मर्द को भी बराबर का शरीक होना पड़ेगा। इसी तरह दूसरे मौक़े पर आपने ख़्वातीन के जनाज़े को खुले तौर पर ले जाने को नापसन्द फरमाया और अपने लिये ताबूत पसन्द फरमाया कि किसी को क़दो क़ामत का भी अन्दाज़ा न हो सके। इस तरह आप ने अपने इस अमल से ज़ाहिर कर दिया कि पर्दा सिर्फ ज़िन्दगी तक ही महदूद नही बल्कि रूह के निकल जाने के बाद भी पर्दा रहता है। एक तीसरा वाक़ेआ पर्दे के सिलसिले में उलमा–ए–किराम ने तहरीर फरमाया है कि एक नाबीना सहाबी फातिमा (अ0) के घर तशरीफ लाये तो आपने यह कहकर इजाज़त नहीं दी कि सहाबी नाबीना हैं तो क्या हुआ! मैं तो नाबीना नहीं हूँ। इस तरह उम्मत की मोमिनात को अपने अन्दाज़ के ज़रिये पर्दे का दर्स इनायत फरमाया। यह ज़ाहिर फरमाया कि पर्दा कोई क़ैद नहीं है। बल्कि समाज को ज़िन्दा व ताबिन्दा रखने के लिये ख़्वातीन की जानिब से एक तोहफा है।

उस्व–ए–फातिमा में आज़ादी–ए–निस्वाँ की एक और नुमायाँ दलील ख़ुत्ब–ए–फिदक है। इस मौक़े पर बीबी ने उम्मत की ख़्वातीन को यह दर्स इनायत किया है कि हक़ की ख़ातिर और बातिल का सर झुकाने के लिये दरबारे शहंशाह में जाकर भी कल्म–ए–हक़ बुलन्द किया जाना चाहिये। इस ख़ुत्बे का मुतालआ करें तो आपको अन्दाज़ा होगा कि पर्दा नशीन कोई ग़ुलाम या क़ैदी नहीं बतिल के ख़िलाफ ठोस इरादा भी हो सकता है।

इस ज़िम्न में तीसरी चीज़ सब्र है। समाज की फलाह व बहबूद सब्र के बग़ैर मुमकिन नहीं। लालच भी समाज को तबाह व बर्बाद कर देती है आज अपने चारों तरफ नज़र दौड़ाइये हर तरफ लालची लोगों की भीड़ है जो आराम के सामान की ख़ातिर बेईमानी को ईमान, हर नाजायज़ को जायज़ और हर हराम को हलाल बनाये हुए हैं। एक दौड़ है जिसमें हर शख़्स शामिल है कि किसी तरह ज़ियादा से ज़ियादा वसाएल उसे मिल जायें। यही वजह है कि समाज जराएम पेशा हो गया है

सब्र व क़नाअत इन समाजी जराएम से छुटकारे का सबब हो सकते हैं।

जनाब फातिमा (अ0) की हयाते तय्यबा पर एक नज़र फरमाइये तो सब्र की कोई इन्तेहा ही नहीं कुर्आने करीम में सूरए दह्र शाहिद है तीन दिन के मुस्तक़िल रोज़े तीनों का अफ्तार साएल के पास चला गया।

इसके अलावा यह वाक़ेआ है कि आपकी वालिदा अरब की मलका थीं मगर आपने कभी राहत व आराम और ज़ेबो ज़ीनत की ज़िन्दगी को पसन्द नहीं किया। बल्कि हमेशा अपने किरदार को एक नमून–ए–अमल बनाकर पेश किया। आपके वालिदे मोहतरम मुख़्तारे कायनात थे और आप उनकी इकलौती बेटी थीं मगर आपने कभी इस रिश्ते से फायदा नहीं उठाया। तमाम ज़िन्दगी ज़हमत और मुसीबत बर्दाश्त करती रहीं। आपके शौहर अमीरुलमोमिनीन (अ0) थे लेकिन तमाम ज़िन्दगी किसी तरह की कोई फरमाईश नहीं की। आपके बेटे जन्नत के नौजवानों के सरदार हैं जिनके लिये जन्नत का लिबास और खाना मौजूद था मगर आप बावजूद इसके फाक़ों में ज़िन्दगी बसर करती रहीं।

आपको रब्बुल आलमीन ने पाँच औलादें अता कीं मगर सबको राहे ख़ुदा में कुर्बान कर दिया सब्र व रिज़ा का इससे बड़ा नमूना किसी ज़माने में किसी ख़ातून ने पेश नहीं किया सिवाय बतूल सैय्यद–ए–आलम (अ0) के। और यह सिर्फ इसलिये कि आपका सब्र मोमिनाते इस्लाम के लिये एक उस्व–ए–हसना रहे और इस्लामी समाज सब्र की दौलत से मालामाल होकर सालेह बन सके।

मिसालें बहुत दी जा सकती हैं मगर इख़्तेसार ज़रूरी है इसलिए इन चन्द मिसालों पर इक्तेफा किया जा रहा है। ताकि मोमिनात उन पर अमल करके इस मग़रिबी प्रोपोगन्डे का शिकार होने से बच सकें जो हमारी इज़्ज़त और पाकदामनी की ताक में बैठा है। आज़ादी–ए–निस्वाँ का ग़लत मतलब समझा कर समाज को बुराई की भटठी में धकेल कर अपनी हवस पूरी करना चाहता है। और अपने महंगे हथियार बेचना चाहता है ताकि समाज बदअमनी और ज़बरदस्ती का शिकार रहे और यह मफाद परस्त लोग अपना उल्लू सीधा करते रहें।

बना लेता है मौज ख़ूने दिल से ख़ुद चमन अपना
वह पाबन्दे क़फस जो फितरतन आज़ाद होता है

आख़िर कलाम में यह दुआ है कि अल्लाह तआला हमें सीरते फातिमा ज़हरा (अ0) पर अमल करने की तौफीक़ अता फरमाये और मग़रिबियत के फरेबी जाल में फंसने से हमारी बच्चियों की हिफाज़त फरमाये और हम इन सिफात को अपने अन्दर पैदा कर सकें जिनको बयान करने की ताक़त ज़बान व क़लम में मौजूद नहीं और जो यक़ीनन अहात–ए–तहरीर से बाहर हैं।

ज़ौजियत से बढ़ गयी शाने सिफाते मुर्तज़ा
फातिमा (अ0) ज़ीनत दह औसाफे शौहर हो गयीं